शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 8
Issue 2
15 July, 2017

सौन्दर्य बोध चित्रण में कालिदास और प्रसाद की रचनाओं में पारस्परिक सापेक्षता

बीज शब्द :

कालिदास, जयशंकर प्रसाद, सौन्दर्य बोध, सौन्दर्य शास्त्र, संस्कृत साहित्य, हिन्दी साहित्य।

कालिदास और प्रसाद दोनो भारतीय साहित्य के अमूल्य धरोहर हैं। इनकी रचनाओं में नाट्य साहित्य विधा के समस्त लक्षण एवं व्यंजनो का व्याकरणिक आभास मिलता है। कालिदास ने जहां अपने नाटकों में शारीरिक सौंदर्य के साथ-साथ भावनात्मक मनोवेगों एवं हृदय की विशालता का सुरुचिपूर्ण चित्रण किया है। वहीं प्रसाद के नाटकों में भी हमें प्रेम के धरातल पर समर्पण, त्याग, निष्कपटता एवं निश्चछलता का प्राकट्य प्रतीत होता है। दोनों ने अपने नाटकों में नारी को प्रकृति से तुलनीय माना है। नारी हृदय की विशालता प्रकृति की विशालता के समान है। दोनों में प्रेम की अभिव्यक्ति उदत्त प्रकृति की है। इसका चरित्र आदर्शवादी है। इस प्रकार सापेक्षिक दृष्टि से दोनों कवियों की रचनाएं समकालीन प्रवृत्तियों को समेटने के साथ ही सार्वकालिक प्रासंगिकता रखती हैं।

*****

डॉ. प्रीति राठौर
एसो. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
डी0बी0एस0 कालेज, कानपुर

सौन्दर्य बोध चित्रण में कालिदास और प्रसाद की रचनाओं में पारस्परिक सापेक्षता

कालिदास एवं जयशंकर प्रसाद दोनों को ही भारतीय साहित्य में मूल्यवान स्थान प्राप्त है। दोनों ही महान नाटककार एवं महान कवि हैं। वे भारतीय संस्कृति, सौन्दर्य, शिवता एवं कर्म के उपासक एवं गायक हैं। दोनों का ही सौन्दर्य बोध शिवमय है, अस्तु, आनन्द का विधायक है। कालिदास के काव्य में सौन्दर्य के लिए मनोज्ञ, मधुर, मनोहर, रमणीय, चारु, ललित, सुभग, रमणीयता, माधुर्य, चारुता एवं लालित्य शब्दों का प्रयोग हुआ है। वे निसर्ग के कवि है; इसलिए जहाँ सहजता चित्त को बरबस हर ले, उसी की खोज है, तथा वही उनके काव्य में विद्यमान भी है। वे कृत्रिमता में सौन्दर्य मानते ही नहीं हैं-

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्मलक्ष्मीं तनोति।
इयमधिमकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।[1]

कालिदास इसी सम्पूर्ण सौन्दर्य के उपासक एवं गायक है, जिसके लिए प्रत्येक वस्तु शोभा बन जाती है। चन्द्रमा में कलंक मनोरम हो जाता है तथा कमल से आविश्ट शैवाल में भी मनोरमता आ जाती है। कालिदास केवल शारीरिक सौन्दर्य के ही शिल्पकार नहीं हैं अपितु उन्होंने भावनात्मक मनोवेगों एवं हृदय की विशालता का भी सुरुचिपूर्ण चित्रण किया है। उनका प्रेम उच्च भावभूमि पर प्रतिष्ठित है। वह बाह्य न होकर आन्तरिक है, असीम है और उज्जवल है, इसलिए उनका सौन्दर्य भी विराट है और वैराट्य से साक्षात्कार कराने वाला है। दुश्यन्त, शकुन्तला को देखकर बरबस ब्रह्मा का स्मरण करने लगता है। कामुकता का वहाँ जन्म नहीं है, वहाँ तो दिव्यता है, सुध-बुध को हर लेने वाला इन्द्रजाल है-

चित्रे निवेश्य परिकल्पितसत्वयोगा
रूपोच्चयेन मनसा विधिना कृतानु।
स्त्रीरत्नसृश्टिरपरा प्रतिभाति सा मे
धातुर्विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः।।[2]

प्रसाद जी के प्रेम का धरातल भी उच्च है, उनका सौन्दर्य भी उदात्त है। उनके यहाँ प्रेम में समर्पण एवं त्याग है। निष्कपटता एवं निश्चछलता प्रेम की पहली शर्त है। प्रेम पथिक में वे कहते हैं-

प्रेम पवित्र पदार्थ न उसमें कहीं कपट की छाया।
उसका सीमित रूप नहीं जो व्यक्ति मात्र में बना रहे।
प्रेम यज्ञ में स्वार्थ और कामना हवन करनी होगी।
तब तुम प्रियतम स्वर्ग बिहारी होने का सुख पाओगे।

प्रेम, सौन्दर्य में जन्मता है। यद्यपि प्रेम का आधान कुरुपता में भी हो सकता है। परन्तु उसका कारण लोभ, वासना या स्वार्थ होगा। प्रसाद जी सौन्दर्य को कायिक मानते ही नहीं हैं। डॉ0 पुरुषोत्तम गणेश सहस्रबुद्धे का विचार है- उचित सन्निवेश अथवा सुश्लिश्ट संगठन ही कला सौन्दर्य की आत्मा है। सभी कलाओं का यह समान धर्म है। इस सुसंगति रचना को देखकर दर्शक मे मन में जो भावना जाग्रत होती है, उसे सौन्दर्य कहते हैं।[3] प्रसाद जी भी सौन्दर्य को चेतना का उज्जवल वरदान मानते हैं-

उज्जवल वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं।
जिसमें अनन्त अभिलाषा के सपने सब जागते रहते हैं।।[4]

हृदय में प्रेम के आधान का द्वार रूप ही है। रूपलिप्सा मन में आकर्षण का भाव भरती है, कौतूहल की सृष्टि करती है तथा प्रेम को पुष्ट करती है। शकुन्तला के रूप से प्रभावित दुष्यन्त के मन में जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि यह किसकी भोग्या बनेगी-

अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलुनं कररुहै-
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।।[5]

यह जिज्ञासा भक्तप्रवर महाकवि सूरदास के यहाँ भी है। यमुना के तट पर पीतवसन से आवृत, लम्बी वेणी वाली राधा को देखकर नागर श्रीकृष्ण अपनी जिज्ञासा का समाधान करने के लिए राधा से पूछ बैठते हैं-

बूझत स्याम कौन तू गौरी?
कहाँ रहति काकी तू बेटी, देखी नहिं कबहूँ ब्रज खोरी?

श्रद्धा के रूप वैभव को देखकर मनु के मन में भी कौतूहल की सृष्टि होती है-

एक झटका सा लगा सहर्श, निखरने लगे लुटे से कौन-
गा रहा यह सुन्दर संगीत? कुतूहल रह न सका फिर मौन[6]

---

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - 1.20, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
2. वही - 2.9, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
3. रस चिन्तन के विविध आयाम, सं0 आनन्द प्रकाश दीक्षित, पृ0 193
4. कामायनी लज्जा सर्ग, पृ0-52, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
5. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - 2.10, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
6. कामायनी, पृ0-29, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009

नारी के रूप वर्णन में कालिदास की दृष्टि जितनी रमी है, प्रसाद की दृष्टि भी उतनी ही रूप स्नात है। आँसू एवं कामायनी दोनों की नायिकाओं के रूप-ऐश्वर्य अत्यन्त प्रभावकारी एवं मनोहारी हैं-

(क) चंचला स्नान कर आवे चन्द्रिका पर्व में जैसी
उस पावन तन की शोभा आलोक मधुर थी ऐसी।[7]

(ख) और उस मुख पर वह मुस्क्यान! रक्त किसलय पर ले विश्राम।
अरुण की एक किरण अम्लान अधिक अलसाई हो अभिराम।।[8]

लहर की नायिका का रूप है-

अधरों में राग अमन्द पिये, अलकों में मलयज बन्द किये।

अधरों में राग और अलकों में मलयज-कालिदास की याद दिलाते हैं। शकुन्तला के अधर भी किसलयवत् रागिमा से आपूरित हैं-

अधरः किसलय रागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमंगेषु सन्नद्धम्।।[9]

कालिदास की नायिकाएं धातुनिर्मित आभूषणों से अपना श्रृंगार नहीं करती हैं। वे अशोक, कुरबक, शिरीश, कमल आदि से अपने को सजाती-संवारती हैं। पतिगृह के गमन के अवसर पर शकुन्तला का श्रृंगार प्रकृति करती है-

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डुतररुणा मांगल्यमाविष्कृतं
निष्ठयूतश्चरणोपभोग सुलभो लाक्षारसः केनचित्।
अन्येभ्यो वनदेवताकरतलैरापर्वभागोत्थितै-
र्दत्तान्याभरणानि तत्किसलयोभ्देदप्रतिद्वन्द्विभिः।।[10]

कालिदास और प्रसाद की रचनाएं भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न युगों की सृष्टि हैं, परन्तु प्रेम एवं सौन्दर्य के विषय में वे असधारण रूप से समान हैं। कालिदास से प्रसाद तक आते-आते जीवन का दायरा संकुचित हुआ। प्रकृति से मानव का सम्बन्ध विच्छिन्न होता गया, नारी पराधीन होती गयी, वह चहारदीवारी में कैद होकर रह गयी। उसके प्रसाधन की सामग्रियों में परिवर्तन हुआ, प्राकृतिक आभूषणों का स्थान कृत्रिम गहनों ने ले लिया। प्रसाद ने इस कृत्रिमता को जान लिया था, इसलिए उन्होंने भी नारी का श्रृंगार प्राकृतिक आभूषणों से किया है, श्रद्धा के लिए जिन उपमानों का प्रयोग किया गया है, वे प्रकृति से ही हैं-

कुसुम वैभव मे लता समान, चन्द्रिका से लिपटा घनश्याम।
मधु पवन क्रीडित ज्यों शिशु साल, सुशोभित हो सौरभ संयुक्त।[11]

इन दोनों महान रचनाकारों की माधुर्यदृष्टि का प्रमुख आयाम है- अन्योन्यता। अन्योन्यता का अर्थ है - एक दूसरे के लिए पूरक होना। यह अन्योन्यता ही प्रेम को तीव्र बनाती है, उसमें समर्पण का भाव जगाती है, उत्सर्ग का भाव लाती है तथा उसे उदात्त स्वरूप प्रदान करती है। इसी अन्योन्यता के कारण ही शकुन्तला को शाप का भागी होना पड़ता है-

विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न सा बोधितोऽपि सन् प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव।।[12]

पूरक होने का यह भाव ही मानव के लिए समन्वय, सामंजस्य, समरसता एवं आनन्द की पृष्ठभूमि तैयार करता है। विरह विद्ग्ध दुष्यन्त के इस चिन्तन में यही भाव विद्यमान है-

कार्या सैकतलीनहंसमिथुना स्रोतोवहा मालिनी
पादास्तामभितो निषण्णहरिणा गौरीगुरोः पावनाः।
शाखालम्बितवल्कलस्य च तरोनिर्मितुमिच्छाम्यधः
श्रृंगे कृष्णमृगस्य वामनयनं कण्डूयमानां मृगीम।।[13]

काले हिरण की नुकीली सींघ पर अपनी बायीं आँख रगडती हुई हिरनी। सींग जितनी कठोर एवं नुकीली है, आँख की पुतली उतनी ही कोमल है, परन्तु हिरनी को विश्वास है कि उसका हिरन सींग हिला ही नहीं सकता है। यह अद्भुत विश्वास ही कालिदास के प्रेम को अमर बनाता है।

कविवर प्रसाद ने भी समर्पण, त्याग, उत्सर्ग, सेवा, परोपकार आदि दिव्यवृत्तियों को हृदय की भाव -निधियाँ बताया है। समर्पण करने के लिए कोई उद्यत तभी होगा, जब सुख-दुःख मे साथ देने का विश्वास होगा। श्रद्धा इसी विश्वास के बल पर

7. आँसू, पृ0-14, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
8. कामायनी, पृ0-30, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, - 1.21, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
10. वही, - 4.4, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
11. कामायनी, पृ0 29, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
12. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - 4.1, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
13. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - 6.17, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण

मनु का सहचन बनने का प्रस्ताव रखती है-

समर्पण लो सेवा का सार, सजल संसृति का यह पतवार।
आज से यह जीवन उत्सर्ग इसी पद तल में विगत विकार।[14]

समर्पित होने से पूर्व कामगोत्रजा श्रद्धा काम से विरत मनु को आकर्षण, काम एवं भोग से युक्त जीवन के प्रति उल्लसित होने को कहती है। कामना करती है कि मनु आत्मविस्तार करें। आत्मविस्तार तभी होगा, जब श्रृंगार पूर्ण होगा और श्रृंगार के लिए उक्त भावों का होना अपरिहार्य है। साहचर्य होने पर काम का भाव उत्पन्न होना सहज है। लहर के एक गीत में प्रसाद जी ने कहा है-

उस दिन जब जीवन के पथ में,
फूलों ने पंखुरियां खोलीं
आंखे करने लगी ठिठोली
हृदयों ने न सम्हाली झोली
लुटने लगे विकल पागल मन।[15]

हृदय लुटने के लिए विवश हो जाता है। मन को सम्बोधित करते हुए प्रसाद जी कहते हैं-

पागल रे! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब
आँसू के कन-कन के गिनकर
यह विश्व लिए है ऋण उधार
तू फिर क्यों उठता है पुकार।
मुझको न मिला रे कभी प्यार।[16]

श्रद्धा, मनु को तो आनन्दलोक ले ही जाती है, स्वयं काम भी समय-समय पर आत्मा की आवाज बनकर जीवन का सन्देश दे जाया करता है। मनु के जीवन वन में यह मधुमय बसन्त चुपके से प्रवेश कर जीवन को पूर्णत: प्रभावित कर देता है। वैदर्भी रीति को पुष्ट करने वाले महाकवि कालिदास ने कुमारसम्भव काव्य में काम का प्रभाव स्थावर जंगम पर इस प्रकार दिखाया जाता है-

तं देशमानोपितपुष्पचापे रतिद्वितीये मदने प्रपन्ने।
कष्टागतस्नेहरसानुविद्धं द्वन्द्वानि भावं क्रियया बभूवु:।।

जड़ चेतन सभी परस्पर अनुकूल जोड़े को देखकर श्रृंगार की दशा में वर्णन करने लगे। यही नहीं विश्व व्याप्त ब्रम्ह भी 'एकोऽहं बहुस्याम्' के रूप में 'काम' (इच्छा) की भावना से प्रेरित होकर सृष्टि रचता है-

कामस्तदग्रे समवर्त्तताधि मनसो रेत: प्रथमं यदासीत्।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा।।[17]

यह काम मनु की दशा को विचित्र बना देता है-

श्रुतियों में चुपके-चुपके से कोई मधुधारा घोल रहा है,
इस नीवरता के परदे में जैसे कोई कुछ बोल रहा है।
है स्पर्श मलय के झिलमिल सा संज्ञा को सुलाता है,
पुलकित हो आँखे बन्द किये तन्द्रा को पास बुलाता है।[18]

मनु के मन की यह दशा अत्यन्त गूढ़ है। प्राचीन कवियों द्वारा वर्णित सीधी कामोत्तेजना से इसकी कोई तुलना नहीं हैं।

कालिदास एवं प्रसाद दोनों की सौन्दर्य प्रतिमाओं को प्रकृति के वातावरण से विच्छिन्न नहीं किया जा सकता है। उनके प्रेम की सीमा मानवमात्र न होकर पशु जगत् तक विस्तीर्ण है। शकुन्तला का हिरनप्रेम किसी को भी प्रभावित करने में समर्थ है। वह हिरनी के घायल मुख में इंगुदी का तेल लगाती है, बच्चे की तरह उसका पालन करती है-

यस्यत्वया व्रणविरोपणभिङ्गुदीनां तैलं न्यषिच्यत मुखे कुशसूचिविद्धे।
श्यामाकमुष्टिपरिवर्धतको जहाति सोखयं न पुत्रकृतक: पदवीं मृगस्ते।।[19]

शकुन्तला की भांति श्रद्धा भी हिरन को पालती है, उसके साथ क्रीड़ा में रत रहती है। हिरन की सहज क्रीड़ा उसे अत्यधिक प्रसन्न करती है-

चपल कोमल कर रहा फिर सतत पशु के अंग
स्नेह से करता चमर-उद्नीव हो वह संग।
कभी पुलकित रोम राज से शरीर उछाल
भाँवरों से निज बनाता अतिथि सन्निध जाल।।[20]

श्रद्धा मनु की हिंसाप्रवृत्ति का विरोध करती है। मनु दिन

14. कामायनी, पृ0-33, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
15. लहर, पृ0-16, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
16. लहर, पृ0-31, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
17. ऋग्वेद, 10.129.4, चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी, 2010
18. कामायनी, पृ0-36, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009
19. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - 4.13, महाकवि कालिदास, भारतीय विद्या संस्थान, 2015, प्रथम संस्करण
20. कामायनी, पृ0-42, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009

भर पशुओं का शिकार करते हैं। श्रद्धा प्रतिरोध करते हुए कहती है–

दिन भर थे कहाँ भटकते तुम बोली श्रद्धा भर मधुर स्नेह
यह हिंसा इतनी प्यारी है जो भुलवाती है देह–गेह।
चमड़े उनके आवरण रहें, ऊनों से मेरा चले काम।
वे जीवित हो मांसल बन कर, हम अमृत दुहें, वे दुग्ध धाम।[21]

नारीसौन्दर्य उस व्यापक सौन्दर्य का एक अंगमात्र है, जो सम्पूर्ण प्रकृति में बिखरा हुआ है। कालिदास एवं प्रसाद दोनों ही प्रारम्भ से प्रकृति के प्रेमी रहे हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में प्रकृति का बहुविध चित्रण किया है। कामायनी मे हिमालय, समुद्र, रात्रि, संध्या आदि का बहुत ही प्रभावकारी एवं स्मरणीय चित्रांकन हुआ है। मेघदूत और कुमारसम्भवम् हिमालय के सुन्दर चित्रों के धनी है। कामायनी से हिमालय का एक चित्र प्रस्तुत है–

छूने को अम्बर मचली सी बढ़ी जा रही सतत् ऊँचाई।
विक्षत उसके अंग प्रगट थे भीषण खड्ड भयंकारी खाई।
रविकर हिमखंडों में पडकर हिमकर कितने नये बनाता,
दुततर चक्कर काट पवन भी फिर से वहीं लौट आ जाता।[22]

वस्तुतः अभिज्ञानशाकुन्तलम् और कामायनी दोनों ही सृष्टियाँ आशा और प्रमोद के वातावरण से प्रारम्भ होकर नियति के गम्भीर प्रवाह में प्रविष्ट होती हुई प्रतीत होती है और फिर एक अद्‌भुत प्रत्यभिज्ञा से परिचालित होकर स्वर्गीय आनन्द की भूमिका पर पहुंचती है। दोनो कवियों के काव्य में सौन्दर्य का चित्रण जितना आदर्शवादी हुआ है, प्रेमाभिव्यक्ति भी उतने ही आदर्शवादी धरातल पर हुई है। दोनों की ही भूमिका उदात्त है। इस उदात्तवृत्ति ने प्रसाद एवं कालिदास को ऐसी सूक्ष्म सौन्दर्य दृष्टि दी है कि उन्होंने नारी के चटकीले रंगों के साथ ही सूक्ष्म रेखाओं और वर्णच्छाटाओं चित्रांकन में भी सफलता प्राप्त की है। इसी उदात्तवृत्ति के कारण उन्हें प्रेम की बारीक से बारीक अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने की शक्ति मिल गई। परिणामतः वे प्रेम का ऊँचा आदर्श प्रस्तुत कर सके। हम यह कह सकते हैं कि दोनों ही महाकवि सौन्दर्य–चित्रण की अपनी प्रतिभा में महान, अप्रतिम और अपराजेय हैं।

21. कामायनी, पृ0–68, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009

22. कामायनी, पृ0–31, जयशंकर प्रसाद, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लिमिटेड़, 2009

◆◆◆

(पृष्ठ 50 का शेष) दशपुर नगर (कुमार गुप्त और.....

दशपुर में प्राप्त अभिलेख और पुरातात्त्विक स्मारक इस नगर की धार्मिक स्थिति के अध्ययन की पर्याप्त सामग्री प्रदान करते हैं। इनके अध्ययन से इस नगर में शैव, शाक्त, वैष्णव, सौर्य, बौद्ध एवं जैन धर्मों के अस्तित्व का परिचय मिलता है। इसके साथ ही धार्मिक समरसता और समन्वय का भी ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार की धार्मिक गतिविधियों ने भी इस नगर के बहुविध विकास में अपना योगदान दिया होगा।

नगरों का ह्रास भारतीय इतिहास की एक विवादास्पद समस्या है। विद्वानों ने नगरों के ह्रास के लिए कई कारणों को उत्तरदायी माना है, जिनमें राजनीतिक अस्थिरता विदेशी आक्रमण, प्राकृतिक आपदा और भारत का रोमन साम्राज्य से व्यापार का ह्रास प्रमुख है। इसी प्रकार से दशपुर के ह्रास के लिए राजनीतिक कारण, व्यापार का ह्रास और आक्रमणों, विशेषकर बाह्रा आक्रमणों को भी उत्तरदायी माना जा सकता है। यद्यपि उस आक्रमण से, जिससे कि मन्दिर क्षतिग्रस्त हो गया था, इस नगर के आर्थिक गतिरोध का अनुमान सहज की किया जा सकता है।

◆◆◆